लेख

सहमति से यौन संबंध बनाने की आयु सीमा बढ़ाने का फ़ैसला: एक समीक्षा

साहिल अरोड़ा तथा चितवन दीप सिंह

2012 की गर्मियों में संदीप पासवान पर एक अवयस्क लड़की को अगवा तथा उसका बलात्कार करने का आरोप लगा। यह बात अलग है कि वह अवयस्क लड़की क़ानूनन उसकी पत्नी थी, जिसके साथ वह पिछले एक साल से सहवास कर रहा था। हाल में पास हुए *यौन अपराध से बच्चों का संरक्षण क़ानून* (आगे से सिर्फ़ क़ानून) की धाराओं के चलते पासवान पर अपनी ही पत्नी को अगवा करने और बलात्कार करने का आरोप लगा।

ऊपर बताया गया मामला इस क़ानून के अनेक परिणामों में से एक उदाहरण है। यह क़ानून बच्चों के साथ किसी भी प्रकार के यौन प्रवेश की कार्रवाई को अपराध मानता है। बच्चे से तात्पर्य, यहां 18 वर्ष से कम आयु के किसी भी व्यक्ति से है। ऐसे व्यक्ति की सहमति की कोई अहमियत नहीं है। 'पेनेट्रेशन' शब्द की परिभाषा का दायरा बढ़ाया गया है जिसके अन्तर्गत सिर्फ़ लिंग-योनि प्रवेश ही नहीं है बल्कि बच्चे के शरीर के किसी भी भाग में किसी भी प्रकार के प्रवेश को शामिल किया गया है। चाहे वह कोई वस्तु हो, हमलावर का कोई अंग हो या चाहे बच्चे से खुद अपने शरीर में किसी तरह का कोई प्रवेश कराया जाए। इस क़ानून के उद्देश्यों और कारणों के वक्तव्य के अनुसार इसका लक्ष्य बच्चों को तथा यौन अत्याचार व शोषण से उन्हें सुरक्षा दिलाने वाले क़ानूनी प्रावधानों को मज़बूत करना है। यह क़ानून इस प्रकार के अपराधों को जेंडर निरपेक्ष बनाता है। बच्चों के ख़िलाफ़ होने वाली अनेक शोषणकारी यौन कार्रवाइयों को पहली बार सज़ा के दायरे लाकर इसने पिछली क़ानूनी कमियों को दूर किया है। यह सब बताने के साथ-साथ यह भी मानना होगा कि वर्तमान सामाजिक ढर्रो पर यह क़ानून ध्यान देने में असफल रहा है जहां आज किशोरावस्था में यौन गतिविधियां धड़ल्ले से चल रही हैं। यह मुद्दा तब और भी अहम हो जाता है जब किशोर/किशोरियों के बीच सहमति से संभोग ही नहीं किसी भी प्रकार की प्रवेशात्मक यौन गतिविधि पर सज़ा का प्रावधान है।

लेखकों की राय में इस तरह का प्रावधान क़ानून लागू करने वाली एजेन्सियों द्वारा बच्चों को परेशान किए जाने का रास्ता खोल देगा। इस क़ानून में उन मामलों में नरमी बरतने के लिए भी कोई जगह नहीं है जहां दोनों भागीदारों की उम्र और परिपक्वता में अंतर बहुत कम होता है। उदार समाजों में संवैधानिक बलात्कार के लिए जगह बनाते हुए इस तरह की शर्तें रखना बड़ी तेज़ी से आम बात हो रही हैं।

हालांकि इस क़ानून के प्रावधानों का उद्देश्य बच्चों और यौन अत्याचार से उनकी सुरक्षा के क़ानूनों को मज़बूत करना है परंतु लेखकों की राय में इसका इस्तेमाल उन्हें नाजायज़ रूप से तंग करने के लिए किया जा सकता है। लेखकों की मांग है कि क़ानूनी प्रावधानों में सहमति से होने वाली यौन गतिविधियों की उम्र पुराने स्तर यानी 16 वर्ष कर दी जानी चाहिए। उनका तर्क है कि यह क़दम बाल अधिकारों के पक्ष में होने के साथ-साथ इस विषय में अन्तर्राष्ट्रीय चलन के अनुकूल भी होगा।

पृष्ठभूमि के मुद्दे

ऊपर बताए गए बदलाव का हम गहराई से विश्लेषण करें, उससे पहले ज़रूरी है कि बच्चों के यौन शोषण की पृष्ठभूमि को समझ लें जो आज हमारे देश में रोज़मर्रा हो रहा है और जिसके कारण यह क़ानून लाना पड़ा।

महिला व बाल कल्याण मंत्रालय की 2007 की रिपोर्ट के अनुसार साक्षात्कार किए गए कुल बच्चों में से 53% ने बताया कि उन्हें किसी न किसी तरह के यौन दुर्व्यवहार का सामना करना पड़ा है और आश्चर्य नहीं है कि उसे करने वाले प्रायः घर के सदस्य, नौकर, टीचर या बच्चे के अन्य जानकार ही होते हैं। 5 से 12 साल की आयु के बच्चों के साथ यह सबसे अधिक होता देखा गया है। उस पर हाल यह है कि हमारी भारतीय दंड संहिता की धाराएं यौन अपराधों के विभिन्न रूपों से निपटने में सक्षम नहीं हैं।

जो धाराएं मौजूदा है वे भी प्रायः लड़कियों के साथ होने वाले अपराधों तक सीमित हैं। लड़कों के लिए कोई प्रावधान नहीं हैं। लड़कियों के लिए भी मात्र एक श्रेणी है— बलात्कार, जिसकी परिभाषा के दायरे में सिर्फ़ योनि-लिंग संभोग शामिल है। अन्य किसी तरह की यौन ज़्यादती या अत्याचार को बलात्कार नहीं माना जाता। इन भयानक आंकड़ों और क़ानूनी लचरपन ने ज़रूरी कर दिया कि बच्चों के साथ होने वाले यौन अपराधों से निपटने के लिए एक अलग क़ानून बने।

क़ानून तथा उसके प्रावधान

यह भारत का पहला ऐसा क़ानून है जो सिर्फ़ और सिर्फ़ बच्चों के साथ होने वाले यौन अत्याचारों के मुद्दों से निपटता है और उन पर होने वली बर्बरता को रोकने के लिए क़ानूनी प्रावधानों को मज़बूत करता है।

यह क़ानून 18 वर्ष से कम उम्र के व्यक्ति को बच्चा मानता है और उन्हें यौन हमलों, यौन दुर्व्यवहार तथा बाल अश्लील व्यापार से सुरक्षा प्रदान करता है। इस क़ानून में पहली बार इन सभी अपराधों को परिभाषित करके उनकी गंभीरता के हिसाब से सज़ाएं तय की गई हैं। इसके तहत आने वाले अपराधों के लिए विशेष अदालतों का गठन करने और जहां तक हो सके एक साल के भीतर मामलों को निपटाने के निर्देश भी दिए गए हैं।

इसके अलावा ऐसे प्रावधान भी हैं जिनका उद्देश्य जांच और मुक़द्मे की प्रक्रिया को बाल मैत्रीपूर्ण और सहानुभूतिपूर्ण बनाना है। संचार माध्यमों में बच्चों की पहचान गुप्त रखना, पीड़ित को राहत व पुनर्वास सुविधाएं देना तथा ऐसे अधिकारियों की नियुक्ति करना जो इस क़ानून के सभी प्रावधानों के उचित कार्यान्वयन पर नज़र रखें।

पिछली क़ानूनी कमियों को दूर करने के साथ ही यह क़ानून तीन अन्य पक्षों में भी सफल रहा है।

पहला— यह जेंडर निष्पक्ष है यानी यह क़ानून मानता है कि यौन अत्याचार लड़कों के साथ भी होते हैं।

दूसरा— यह सबूत पेश करने की ज़िम्मेदारी मुल्ज़िम पर डालता है। इससे मुकद्में की कार्रवाई न्यायोचित होने और बच्चों को अतिरिक्त तकलीफ़ से बचाने में मदद मिलेगी।

तीसरा— यह क़ानून "छेड़छाड़" जैसी हल्की फुल्की और सतही शब्दावली को हटाकर, यौन हमला तथा प्रवेश सहित यौन हमला जैसे शब्दों का प्रयोग करता है और उनके बीच के फ़र्क़ को स्पष्ट करता है।

यह सही दिशा में पहला कदम है जो आगे और भी बेहतर प्रावधानों के लिए रास्ता खोलता है।

आश्चर्य नहीं कि संसद के निचले सदन ने इसे 'मील का पत्थर' क़ानून बताया है। इस सभी तारीफ़ के बीच यह भी कहना होगा कि इस बिल को जल्दबाज़ी में क़ानून बना दिया गया है जिसके कारण कुछ अहम मुद्दे नज़रअंदाज़ हो गए हैं।

क़ानून के साथ दिक्क़तें

यह क़ानून 18 वर्ष से कम उम्र के लोगों के बीच की गई सभी सहमतिपूर्ण यौन क्रियाओं का अपराधीकरण करता है। यानी यह क़ानून इस बेतुकी सोच के साथ चलता है कि भारत में किशोर आयु के बच्चे यौन रूप से सक्रिय नहीं है। और अगर वे कुछ करते हैं तो वह ग़लत और उनके लिए हानिकारक है।

यहां यह याद रखना होगा कि बिल का जो मसौदा बाल अधिकार संरक्षण आयोग को पेश किया गया था उसमें सहमति से संभोग की न्यूनतम आयु 16 वर्ष रखी गई थी। जिसे संसद की स्थायी समिति ने बढ़ा कर 18 वर्ष कर दिया। उनका तर्क था कि अन्य सभी क़ानूनों में 18 वर्ष से कम के व्यक्ति को बच्चा माना जाता है। *बाल अपचारी न्याय क़ानून 2006* का हवाला देते हुए कहा गया कि 18 वर्ष से कम उम्र के व्यक्ति को बच्चा मानने पर रज़ामंदी का मुद्दा बेमानी हो जाता है। 1990 के संयुक्त राष्ट्र संघ के *बाल अधिकार समझौते* (सीआरसी) के अनुकूल है, भारत जिसका सदस्य है।

देश के विद्वानों और क़ानूनविदों ने इन सभी दावों को सिरे से खारिज कर दिया है। अतिरिक्त सत्र न्यायाधीश कामिनी लाऊ ने इस क़ानून को "पिछड़ा और क्रूर" बताया है।

न्यायाधीश भट्ट का कहना है कि इस तरह के प्रावधान के चलते, लड़कियों के माता पिता की शिकायत पर बलात्कार के अपराध में अनेक लड़कों को बग़ैर यह जाने पकड़ लिया जाएगा कि लड़कियां रज़ामंद साथी थीं या नहीं।

दरअसल समाजशास्त्रियों और मनोवैज्ञानिकों ने ज़ोर दिया है कि हम इस सच को अनदेखा नहीं कर सकते कि 18 साल से कम उम्र के अनेक लड़के और लड़कियां यौन गतिविधियों में सक्रिय हैं।

बाल अधिकार संरक्षण आयोग की अध्यक्षा शांता सिन्हा के अनुसार "इस क़ानून के ग़लत इस्तेमाल की संभावनाएं बहुत अधिक हैं। हो सकता है कि 16-17 वर्ष के बच्चों में यौन जिज्ञासा हो और वे यौन संबंधों को जानना और अनुभव करना चाहें। यह क़ानून उन सबको अपराधी करार दे सकता है।" इस विशेष प्रावधान की तीन कमज़ोरियां गिनाई गई हैं।

सामाजिक सच्चाइयों की अनदेखी

इस क़ानून के साथ पहली बड़ी दिक्कत यही है कि यह भारतीय समाज की वर्तमान ज़मीनी हक़ीकतों को नज़रअंदाज़ करता है।

शहरी भारत में तेज़ी से बदल रहे मौजूदा रवैयों, सामाजिक संवेदनाओं के चलते चारों ओर एक बड़ा बदलाव दिखाई दे रहा है। आज किशोर बच्चों में यौन उत्सुकता बढ़ रही है, फलस्वरूप वे यौन रूप ज़्यादा सक्रिय हैं।

जनसंख्या अध्ययन के भारतीय संस्थान का कहना है कि विवाह पूर्व यौन संबंध स्वीकारने वाले 42% पुरुषों तथा 26% स्त्रियों ने माना कि उनमें से बड़ी संख्या में वे उस समय 18 वर्ष से कम आयु के थे। इसलिए ऐसे समाज में किशोरावस्था के यौन संबंधों का अपराधीकरण करना, जहां यह काफ़ी प्रचलन में है बेवजह हज़ारों लड़कों को बलात्कार के मुकद्मों में फंसा देगा।

यहां इस बात पर ज़ोर देना ज़रूरी है कि 16 से 18 वर्ष की उम्र ऐसी है जब बच्चों में अनेक हारमोन जनित बदलाव आते हैं। संभावना है कि जहां कहीं लड़के और लड़की के बीच झगड़ा होगा तो लड़की अपने साथी पर बलात्कार का आरोप लगा सकती है और उस अवयस्क लड़के के पास अपने बचाव का कोई क़ानूनी रास्ता नहीं होगा। हमारे क़ानून निर्माताओं ने इन अहम मुद्दों को अनदेखा कर दिया है। वे एक ऐसी प्रवृत्ति का अपराधीकरण कर रहे हैं जो सामान्य और बढ़ती उम्र के लड़के-लड़कियों के जीवन का आवश्यक भाग है। इस प्रकार से जो क़ानून निर्माता पुराणपंथी ऊंचे नैतिक मंच पर बैठ कर इस गतिविधि को गलत बता रहे हैं वे वास्तव में नैतिक चौकसी को बढ़ावा देकर युवाओं की प्रताड़ना में इज़ाफ़ा करेंगे।

इस प्रावधान के पीछे की मान्यता है कि ऐसे क़ानून से युवाओं को यौन गतिविधि से दूर रखने में मदद मिलेगी। लेकिन धरातल की सच्चाई इससे बिल्कुल उलट है। क़ानून के प्रति सीमित सम्मान और केबल व इन्टरनैट की उपलब्धता के कारण आज बच्चे कम उम्र में ही अपनी यौनिकता के प्रति सचेत हो रहे हैं और वे 18 वर्ष से पहले ही यौन संबंध बनाने से बिल्कुल नहीं झिझकते। इस देश के क़ानून निर्माता अपने नैतिक पूर्वाग्रहों के कारण यह नहीं समझ पा रहे हैं कि आज युवक-युवतियां यौन अनुभव पाने के लिए शादी होने तक का इंतज़ार नहीं करते। अतः क़ानूनी प्रावधान और सामाजिक सच्चाई के बीच संतुलन की कमी के चलते यह क़ानून ठीक से लागू नहीं हो पाएगा।

दरअसल संदीप पासवान मामले में न्यायपालिका ने कहा कि "बच्चों को सद्गुण और विवेक क़ानूनी प्रावधानों के ज़रिए नहीं सिखाया जाता। बेहतर होगा कि यह काम माता-पिता और अध्यापकों पर छोड़ दिया जाए। स्कूलों में बच्चों को यौन शिक्षा दी जानी चाहिए।"

घरेलू क़ानूनों के साथ तालमेल में नहीं

इस प्रावधान के साथ दूसरी अहम दिक्कत यह है कि भारत में आज भी बाल विवाह हो रहे हैं और यह प्रावधान इस तथ्य की अनदेखी करता है। विश्व के बच्चों की स्थिति पर यूनिसैफ़ की रिपोर्ट बताती है कि भारत के 18 वर्ष से कम उम्र के 47% बच्चे शादीशुदा है और उनमें से 26% यौन गतिविधि से जुड़े हैं।

हालांकि *बाल विवाह निषेध क़ानून 2006*, 18 वर्ष से कम आयु की लड़की और 21 वर्ष से कम आयु के लड़के के विवाह की आज्ञा नहीं देता लेकिन वह ऐसी शादियों को रद्द भी नहीं मानता जब तक कि लड़का या लड़की खुद ऐसा न चाहें। इस प्रकार से बाल विवाह क़ानून तथा इस क़ानून के प्रावधान एक दूसरे के विरोधी है। एक तरफ़ बाल विवाह क़ानून बच्चों की हो चुकी शादियों का बर्दाश्त करता है दूसरी तरफ यह क़ानून उनके बीच शारीरिक संबंध को अपराध कहता है। यानी दो अवयस्क लोगों के बीच शादी हो सकती है, वे साथ रह सकते हैं लेकिन संभोग नहीं कर सकते।

संसद की स्थाई समिति बिल के स्तर पर इस विरोधाभास को दूर कर सकती थी।

यहां एक और क़ानूनी पेंच भी है जो रज़ामंदी की उम्र के प्रावधान के विरोध में है। वह है *भारतीय दंड संहिता,* जिसके खंड़ 375 में कहा गया है कि 15 वर्ष से अधिक की विवाहित लड़की के साथ पति द्वारा किया गया संभोग, बलात्कार नहीं कहा जा सकता। यहां तो पत्नी की रज़ामंदी की बात भी नहीं उठाई गई है। जबकि 15 वर्ष से अधिक की विवाहित लड़की जो 18 वर्ष से कम है इस क़ानून के तहत बच्ची है। जिसके साथ संभोग अपराध है।

बड़ी हास्यास्पद स्थिति है कि *भारतीय दंड संहिता* जिस बात की छूट देती है, यह क़ानून उसी को अपराध मानता है। अतः यदि रज़ामंदी की उम्र को घटा कर 16 नहीं भी किया जाता तब भी 18 से कम और 16 से ऊपर के विवाहित जोड़ों के लिए अवश्य संशोधन लाना पड़ेगा। तभी यह क़ानून, *बाल विवाह निषेध क़ानून* तथा *भारतीय दंड संहिता* के खंड 375 के तालमेल में होगा और विवाहित अवयस्क बच्चे क़ानून की प्रताड़ना और अन्याय से बच पाएंगे।

अन्तर्राष्ट्रीय समझौते की अनिवार्यता नहीं

इस क़ानून में बच्चे की परिभाषा की सफ़ाई के तौर पर तर्क दिया जाता है कि सीआरसी के तहत उनकी परिभाषा (18 वर्ष से कम) को स्वीकारना अनिवार्यता है।

हालांकि इस समझौते की शर्तों का विश्लेषण करने से पता लगता है कि बच्चा शब्द की परिभाषा का सिर्फ़ सुझाव दिया गया है तथा इसका यौन संबंध की उम्र से कोई ताल्लुक नहीं है।

इसके अलावा कई और देश भी सीआरसी के सदस्य हैं जिन्होंने अपने यहां रज़ामंदी से यौन संबंधों की उम्र 18 वर्ष से कम रखी है। आज विश्व में रज़ामंदी की औसत उम्र 16 वर्ष है। कुछ देशों में तो यह 13 से 16 वर्ष के बीच है। जिन देशों में यह 18 वर्ष है वे प्रायः पिछड़े हुए और पुराणपंथी देश हैं। क्या हम उनकी संगत में रहना चाहेंगे? सबसे फ़िक्र की बात तो यह है कि उच्चतम न्यायालय के सेवा निवृत्त न्यायाधीश के नेतृत्व वाली विधि समिति द्वारा, हाल के वर्षों में दो बार रज़ामंदी की उम्र बढ़ाने के सुझाव को ख़ारिज करने के बावजूद हमारे क़ानून बनाने वाले ऐसा प्रस्ताव लाए हैं।

सन 2000 में न्यायमूर्ति बी पी रेड्डी ने बलात्कार क़ानून का पुनरीक्षण करते हुए कहा था कि रज़ामंदी की मौजूदा उम्र (यानी 16 वर्ष) जारी रहनी चाहिए। सन 2008 में *बाल विवाह निषेध क़ानून* में संशोधन का प्रस्ताव देते समय न्यायमूर्ति ए आर लक्ष्मणन ने भी इसी उम्र को बनाए रखने पर ज़ोर दिया था।

सारांश

यह सही है कि यह क़ानून बाल यौन अत्याचार की समस्या से निपटने का एक असरदार ज़रिया है और भारतीय क़ानून व्यवस्था की कुछ कमियों को भी दूर करता है। परंतु यह "बुरे प्रावधानों वाला अच्छा क़ानून" का उदाहरण बन गया है। रज़ामंदी की उम्र बढ़ाने के साथ यह क़ानून बेवजह, बेतुकी शिकायतों को बढ़ावा देगा। यह कोई समाधान देने के स्थान पर पुलिस द्वारा अवयस्कों को तंग किए जाने का ज़रिए बन जाएगा। क़ानून बनाने वालों को समझना होगा कि आज अवयस्क युवा आपसी सहमति से यौन संबंध जोड़ रहे हैं। उन्हें सींखचों के पीछे डालना बच्चों पर अत्याचार है और जिसे रोकने के लिए ही यह क़ानून बना है। विधि निर्माताओं को यह समझना होगा कि हमें सज़ा देने के एक उपाय की ज़रूरत नहीं है बल्कि एक ऐसा क़ानून चाहिए जो बाल अत्याचारों के लिए मुजरिमों को सज़ा देने और बच्चों की यौन स्वायत्तता सुरक्षित रखने के बीच संतुलन के साथ कारगर हो।

इसका एक तरीका यह है कि उम्र के कम अंतर वाले दो लोगों के बीच रज़ामदी से हुए यौन संबंध पर सज़ा न दी जाए। साथ ही स्कूलों में बच्चों को यौन शिक्षा दिए जाने की अहम ज़रूरतों की दिशा में काम हो ताकि वे न सिर्फ़ ख़तरों से आगाह रहें बल्कि यौन संबंधों के बारे में जो भी फ़ैसला करें वह सोच समझकर, पूरी जानकारी के साथ हो।

इस संदर्भ में माता-पिता की भी अहम भूमिका है। उन्हें यह समझना चाहिए कि हमारी संस्कृति अटल और अखंड नहीं है। वह समय के साथ बदलती है और बदलनी चाहिए।

लेखकों का दृढ़ विश्वास है कि सिर्फ़ इस प्रावधान में संशोधन लाकर बाकी प्रावधानों को जस का तस रखते हुए यह क़ानून समस्या से निपटने में बहुत मद्दगार होगा।

अतं में प्रो. कॉनराड के वक्तव्य "सबसे अच्छा क़ानून वह होता है जो भविष्य की असंगतियों से प्रभावी ढंग से निपट सके" का इस्तेमाल करते हुए कह सकते हैं कि क़ानून बनाने वालों का समझना चाहिए कि उनका फ़र्ज़ भविष्य की असंगतियों से निपटने वाला क़ानून बनाना है न कि वर्तमान में असंगतियां पैदा करने वाला।

साभारः मानुषी